तेरी मेरी उसकी बात

नई सरकार की नई शिक्षा नीति

मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा नई शिक्षा नीति का मसौदा घोषित कर दिया गया है। भाग-ए स्कूली शिक्षा और भाग-बी उच्च शिक्षा को अलग-अलग करते हुए नीतिगत परामर्श हेतु जारी दस्तावेज ऑन लाइन टाइम बाउंड mygov.in पर जारी किया गया है। शिक्षा नीति में दिये गये बिन्दु राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की वेबसाइट पर भी 'शिक्षा बचाओ' के अंतर्गत देखा जा सकता है। यह जनता के विभिन्न वर्गों में सभी स्तर के लोगों से परामर्श और सुझावों की मांग करता है।

निश्चित रूप से शिक्षा सामाजिक विकास के लिये पहली शर्त है। शिक्षा की जब हम बात करते हैं तो पहले पायदान पर ही अटक कर रह जाते हैं और साक्षरता के आंकड़ों से ही बात खत्म कर देते हैं। आज़ादी के अड़सठ सालों के बाद भी हम शिक्षित तो क्या देश के हर नागरिक को अक्षर ज्ञान भी नहीं करा पाये। आज भी पुरुष साक्षरता बयासी और स्त्री साक्षरता बासठ प्रतिशत ही है। हर सरकार अपनी विचारधारा के आधार पर नीतियों का निर्माण करती है। सामाजिक संरचना और वैचारिकता के निर्माण के लिये शिक्षा और संस्कृति दो आधारभूत अवयव हैं। इसीलिये नयी शिक्षा नीति के निर्माण हेतु जो दस्तावेज जारी किये गये हैं उनमें नीतिगत परामर्श हेतु कुछ प्रकरण और प्रश्न हैं जिन पर राय दी जा सकती है। स्कूली शिक्षा आधारभूत सामाजिक ढाँचा तैयार करती है जिसका उतना ही महत्व है जितना उच्च शिक्षा का। सामाजिक समरसता और कल्याण के लिये स्कूली शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाना बेहद जरूरी है। स्कूली शिक्षा संबंधी नीतिगत परामर्श हेतु जारी दस्तावेज में तेरह प्रकरण हैं और हर एक प्रकरण में चार से लेकर तेरह प्रश्न हैं।

पहले प्रकरण का आरंभिक वाक्य ही सोचने पर मजबूर करता है जिसमें कहा गया है ''प्रारंभिक शिक्षा में सुलभता और स्कूल में बने रहने में सुधार'' हो चुका है लेकिन अब चिंता का विषय है बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता। चिंता है कि ''पाँचवी कक्षा के कई बच्चे सरल पाठों को भी नहीं पढ़ सकते और गणित के सरल सवालों को भी हल नहीं कर सकते।'' आगे कहा गया है कि ''गुणवत्ता संबंधी मुद्दों और उसके निर्धारण तत्वों जैसे कि प्रशिक्षित अध्यापकों की उपलब्धता, अच्छी पाठ्यचर्या और बच्चों के अधिगम परिणामों पर प्रभाव डालने वाला नवीन शिक्षा शास्त्र सुनिश्चित'' करना है।

पिछले लंबे अर्से से प्राइमरी शिक्षा के क्षेत्र में काम करते हुए जो अनुभव हैं उनके आधार पर इस अवधारणा पर ही विचार करना जरूरी है कि क्या सचमुच अब सभी बच्चे स्कूली जाने लग गये हैं? क्या अब ड्रॉप आउट्स की समस्या नहीं रही? आज भी बड़ी संख्या में बच्चे पंजीकृत होने से रह जाते हैं। लड़कियों की खासी बड़ी संख्या पंजीकृत नहीं हो पाती, विशेषकर गाँवों में यह स्थिति अधिक गहरी है। यह भी देखा गया कि पंजीकरण तो हो गया लेकिन बच्चा या बच्ची स्कूल नहीं जा रहे। इसके अनेक कारण हैं। अक्सर जातिगत भेदभाव के चलते स्कूल में मैत्रीपूर्ण वातावरण न होना या परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण बच्चे को काम में लगा देना उसे स्कूल से दूर कर देता है। मिड डे मील ने बच्चों को स्कूल में जाने के लिये प्रेरित किया था। लेकिन ताजा बजट में मिड डे मील के बजट में 33 प्रतिशत की कटौती कर

दी गयी है। इसकी भरपायी कैसे होगी तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ गुणवत्तापूर्ण भोजन कैसे मिलेगा, इसे सुनिश्चित करना होगा। शिक्षा के खराब स्तर का एक कारण सरकारी स्कूलों की बेहद कमी होना है। उ. प्र. का हमारा अनुभव बताता है कि गाँव-शहर दोनों जगह सरकारी प्रायमरी स्कूलों में औसतन डेढ़ शिक्षक हैं। पाँच कक्षाएं-शिक्षक एक या दो। फिर इनको ही मिड डे मील की व्यवस्था देखनी है। जरूरत पड़ने पर शिक्षण के अलावा, सर्वे, जनगणना आदि दूसरे काम भी करने हैं। बच्चे ब्लैक बोर्ड से सुलेख ही लिखते रहते हैं या गणित के सवालों की नकल उतारते रहते हैं। इसके अलावा हर गली कूचे में प्राइवेट स्कूलों हैं जो शुद्ध व्यापार कर रहे हैं। कामगार-मजदूर माँ-बाप भी सरकारी स्कूलों में बच्चे नहीं भेज पाते और प्राइवेट स्कूल में हाल ये है कि बच्चे बने रहें, इसीलिये पढ़ाई होती नहीं, बराये नाम परीक्षा होती है और आँख मूंदकर बच्चे अगली कक्षा में चढ़ जाते हैं। अक्सर लड़के कभी समय पर फीस नहीं तो कभी ड्रेस के न होने से या शिक्षक द्वारा की जाने वाली मारपीट जैसी प्रताड़ना से परेशान होकर स्कूल छोड़ देते हैं और काम धंधों में लग जाते हैं। यह भी देखा जाना चाहिये कि बड़ी संख्या में बाल श्रमिक विभिन्न धंधों में लगे हुए हैं। उनको समावेशित करने का कोई कार्यक्रम नहीं है। पिछली सरकारों के कार्यकाल में बाल श्रमिक स्कूल खोले गये लेकिन वे बेहद अव्यवहारिक तरीके से चले और संचालकों का धंधा पानी चलता रहा। शहरी स्लम इलाकों और गाँवों में लड़कियों की बड़ी संख्या न तो पंजीकृत होती है और न ही उनकी शिक्षा के बारे में कोई पूछने वाला है। कहीं गरीबी तो कहीं जातिवादी मानसिकता के कारण सामान्य समझी जाने वाली सामाजिक प्रताड़ना। श्रमिक माँ-बाप अगर काम पर चले गये तो छोटे भाई बहनों को संभालने की जिम्मेदारी। अगर यह सब न हुआ और प्रायमरी शिक्षा प्राप्त कर ली तो दूर के स्कूलों में माँ-बाप नहीं भेजते कि न जाने कब लड़की के साथ कोई हादसा हो जाय। 'शिक्षा का अधिकार' बिल पारित हुए इतना समय हो गया लेकिन वास्तविकता यही है कि बड़ी संख्या में विशेष कर अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े अल्पसंख्यक मुस्लिम समाज के बच्चे शिक्षा की पहुंच से बाहर हैं। एन.एस.एस.ओ. की एक रिपोर्ट के अनुसार एक बड़ा प्रतिशत अनुसूचित जाति, जनजाति और मुस्लिम वर्ग का निरक्षर है और स्कूल नहीं जाता है। इसमें भी लड़कियों की संख्या बहुत बड़ी है।

एक चिंता की बात यह है कि ग्रामीण क्षेत्र में, बावजूद सरकारी प्रयासों और दावों के, निरक्षरता बढ़ रही है। सोशियो-इकोनोमिक कास्ट सेन्सस (एस.ई.सी.सी.) 2011 के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में 36 प्रतिशत निरक्षर पाये गये। इसी सर्वे के अनुसार केवल 5.4 प्रतिशत ग्रामीण हाई स्कूल उत्तीर्ण पाये गये और 3.4 प्रतिशत को कालेज शिक्षा मयस्सर हुई। इसीलिये 23.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों में 25 वर्ष से ऊपर का वयस्क साक्षर नहीं मिला।

इसका मुख्य कारण उसी रिपोर्ट के अनुसार बड़ी संख्या में ड्रॉप आउट्स का होना तथा शिक्षा का स्तर बहुत नीचा होना है जिसके कारणों पर चर्चा ऊपर की गयी है। कुछ राज्यों में तो निरक्षरता का आँकड़ा 47.6 प्रतिशत (राजस्थान) तक है। ग्रामीण भारत में 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों का स्कूल में पंजीकरण तो होता है लेकिन इसके बावजूद 36 प्रतिशत निरक्षर आबादी है। गैर पंजीकृत बच्चों में अधिकांश संख्या बालिकाओं की है। बढ़ती निरक्षरता और गुणवत्ताविहीन प्राथमिक शिक्षा की इस स्थिति को देखते हुए केवल 6 प्रतिशत के लगभग उच्च शिक्षा प्राप्त जनसंख्या की बात समझ में आती है जहां लड़कियों के मामले में

यह मात्र 3 प्रतिशत के लगभग है।

इसीलिये नयी शिक्षा नीति में यह धारणा दूर की जानी चाहिये कि अब सभी बच्चे स्कूल जाते हैं और ड्रॉप आउट जैसी समस्या हल कर ली गयी है।

सन् 2005 में यशपाल कमेटी द्वारा शिक्षा का विज़न-2005 दस्तावेज कांग्रेस सरकार के लिये प्रस्तुत किया गया था। उसमें सर्वशिक्षा अभियान की सफलता के लिये 'पड़ोस में स्कूल' जैसी अवधारणा प्रस्तुत की गयी थी। लेकिन उस समय भी सरकार ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया था।

गुणवत्ता युक्त शिक्षा के लिये सरकार का 'पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप' प्रस्ताव भी है। दरअसल शिक्षा सर्वसुलभ न होने का एक कारण शिक्षा में निजी क्षेत्र का निरंतर बढ़ता दायरा है जहां शिक्षा व्यवसाय बनकर रह गयी है। आज साधारण परिवारों का कोई बच्चा शायद ही इंजीनियरिंग, मेडीकल जैसी शिक्षा प्राप्त करने में सक्षम हो सकता है क्योंकि सरकारी शिक्षण संस्थान पर्याप्त नहीं है और प्राइवेट संस्थानों में बात लाखों-करोड़ों में होती है। आज शिक्षा का स्तर आर्थिक आधार पर तय होता है और इसीलिये देश स्पष्ट रूप से दो हिस्सों में बंटा नजर आता है। एक 'शाइनिंग इंडिया' और दूसरा देसी हिन्दुस्तान। पहले भी चिकित्सा क्षेत्र की भांति शिक्षा को निजी हाथों में सौंपने की इच्छा तत्कालीन कांग्रेस सरकार जाहिर कर चुकी थी। अब शायद इसे रोक पाना संभव न होगा।

दिये गये प्रकरणों में एक प्रश्न भाषा का भी है। अंग्रेजी भाषा का ऐसा भयानक दबाव है कि हर गली कूचे का स्कूल 'इंग्लिश मीडियम' होने का दावा करता है। 'विजन-2005' में स्पष्ट रूप से प्रारंभिक स्कूली शिक्षा में 'मातृभाषा' को तरजीह देने की बात कही गयी थी। प्रारंभ में बच्चा जिस भाषा में सुविधा महसूस करे-उसका प्रयोग होना चाहिये। किसी एक भाषा में संप्रेषणीयता सुनिश्चित करके बाद किसी भी अन्य भाषा (अंग्रेजी भी) में पारंगत हुआ जा सकता है। आज भाषा के स्तर पर विद्यार्थियों का अधकचरापन चिंता का विषय है। वे न तो अपनी मातृभाषा, न राष्ट्रभाषा और न ही 'मोस्ट वांटेड' अंग्रेजी में कुशलता हासिल कर पाते हैं। हमारे ख्यात वैज्ञानिक पी.सी.राय और जगदीश चंद्र बसु तथा अन्य अनेक विद्वानों की जीवनी में संतुष्ट है कि उनकी आरंभिक शिक्षा सरकारी स्कूलों में हुई जहां अंग्रेजी छठी कक्षा से आरंभ होती थी। आज पैदा होते ही अंग्रेजी का भूत माँ-बाप और बच्चों के सिर पर ऐसा सवार होता है कि भाषा के स्तर पर कोई व्यक्तित्व ही नहीं बन पाता है।

प्रकरण बारह में -''व्यापक शिक्षा-नीति शास्त्र, शारीरिक शिक्षा, कला एवं शिल्प, जीवन कौशल'' पर चर्चा की गयी है। हमारा मानना है कि उपरोक्त सभी विषय बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिये जरूरी हैं। लेकिन प्रकरण में प्रस्तुत ज्ञान, संस्कृति, भाषा और नीति जैसी शब्दावली का आधारभूत स्वरूप क्या होगा, यह सुनिश्चित करना जरूरी है। भारतीय संस्कृति का ज्ञान आज की स्थितियों में जरूरी है लेकिन हमारी संस्कृति की विशालता और व्यापकता एक बड़ी विशेषता है। भारतीय संस्कृति में साहित्य, कलाएं और ऐतिहासिकता ने विभिन्न समाजों के बीच समन्वयक की भूमिका निभाई है और एक समावेशित-समरसता पूर्ण समाज का निर्माण भी किया है। संकीर्ण मनोभाव शिक्षा को आधुनिक और विश्वस्तरीय स्वरूप नहीं दे सकते। आज वैश्विक पटल पर उच्च तकनीकी और वैज्ञानिक शिक्षा ही नये अनुसंधानों की ओर युवाओं को अग्रसर कर सकती है। अभी हाल ही में किसी ने ठीक कहा कि 'पिछले लंबे समय में विज्ञान का क्षेत्र हो

या सामाजिक विज्ञान का किसी भारतीय ने विश्व स्तर का कोई नया अनुसंधान या वैचारिकी नहीं दी है।' दरअसल उदारवादी और बाजारवाद केंद्रित आर्थिक नीतियों ने सामाजिक सरोकार ही बदल दिये और ज्ञान पिपासा तथा नयी अकादमिक उपलब्धियों के स्थान पर शिक्षा अधिक से अधिक धन कमाने का साधन बन गयी है। बौद्धिकता और ज्ञान का मुकाबिला बाजार और उपभोक्तावाद से है और इसी से सामाजिक-राजनैतिक दृष्टिकोण का निर्माण हो रहा है।

इंडियन एक्सप्रेस के 18 जुलाई, 2015 के अंक में एक समाचार के अनुसार मानव संसाधन मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी की आवास पर एक बैठक हुई जिसमें राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के शिक्षा समूह से जुड़े संगठनों-शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, शिक्षा बचाओ आंदोलन, राष्ट्रीय शिक्षक महासंघ, अखिल भारतीय इतिहास संकलन समिति और विद्या भारती से जुड़े लोगों ने भाग लिया। इसका समन्वयन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सह-सरकार्यवाह डा. कृष्ण गोपाल ने किया। इसमें मुख्य रूप से आर.एस.एस. से जुड़े उपरोक्त संगठनों तथा मानव संसाधन मंत्रालय के बीच समन्वयन की प्रक्रिया पर विचार किया गया। इसी बैठक में नौकरशाहों को अकादमिक संस्थानों का मुखिया बनाने, विश्वविद्यालयों को अपना पाठ्यक्रम तैयार कराने का अधिकार देने तथा इतिहास पुस्तकों के पुनर्लेखन तथा विश्वविद्यालयों में कुलपतियों की नियुक्ति संबंधी नीति के बारे में विचार किया गया। इसी के साथ राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ द्वारा गठित शिक्षा बचाओ आंदोलन समिति, राष्ट ्रीय शिक्षा आयोग को एक स्वायत्व संस्था बनाने के लिए भी विचार कर रही है।

बात फिर वही शिक्षा की गुणवत्ता पर आती है। विचारधारा विशेष के लोगों की फौज खड़ी करना और सत्ता को मजबूत करना एक बात है लेकिन नये ज्ञान, नये अनुसंधान, नई तकनीकी शिक्षा के साथ दर्शन, संस्कृति-साहित्य की नवीनतम धाराओं का अध्ययन और अंतःक्रियात्मकता बौद्धिकता का विस्तार करती है और चिंतन की नयी दिशाएं प्रशस्त होती हैं। ज्ञान की समृद्धि की यही प्रक्रिया मानव समाज के विकास का इतिहास है। स्वायत्त शिक्षा आयोग का गठन आर.एस.एस. की विचारधारा को पुष्ट करके उसे भारतीय समाज में स्थापित तो करेगा लेकिन ज्ञानात्मक बोध को संकीर्ण कर देगा। चीन में आज़ादी के बाद शिक्षाविदों और साहित्यकारों की एक बैठक में वैचारिक संकीर्णता का विरोध करते हुए माओत्से तुंग ने कहा था 'सौ फूलों को खिलने दो-हजार विचारधाराओं को पनपने दो।' बेहद मीडियॉकर गजेंद्र चौहान को प्रतिष्ठित फिल्म इंस्टीट्यूट का निदेशक बनाये जाने का हालिया प्रकरण इसका एक छोटा उदाहरण है। शिक्षा नीति में सभी वर्गों को समावेशित करना, बड़ी संख्या के ड्रॉप आउट्स को रोकना, अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े मुस्लिम समाज पर तथा ग्रामीण क्षेत्र में विशेष ध्यान देना और साथ ही बालक-बालिकाओं को स्वस्थ रखने हेतु पुष्टाहार को सुनिश्चित करके ही शिक्षा की गुणवत्ता को बनाया और बढ़ाया जा सकता है।

यूँ शिक्षा नीति के मसौदे को सार्वजनिक कर सुझाव मांगे गये हैं और इसे लोकतांत्रिक दिखाने की कोशिश की गयी है। साइट यूजर्स के लिये प्रदेश स्तर पर जिला, शहरी स्थानीय निकाय, प्रखंड और पंचायत स्तर तक बाकायदा निर्देश हैं और इसी तरह से सर्वे यूजर्स के लिये पंचायत या स्थानीय निकायों के लिये सर्वे प्रपत्र हैं जो भरे जायेंगे। सभी स्तरों पर पूरी जानकारियां वेबसाइट पर उपलब्ध हैं।